

बिजौलिया किसान आंदोलन में शामिल क्रांतिकारियों का योगदान

Vijay Singh

M.A., UGC-NET, Department of History, University of Rajasthan, Jaipur

सार

बिजौलिया किसान आंदोलन (1897 से 1941 तक) भारत का सबसे लंबा और अहिंसक किसान आंदोलन था, जिसमें विभिन्न क्रांतिकारियों और नेताओं ने अहम योगदान दिया: [1, 2, 3, 4]

प्रमुख क्रांतिकारी एवं नेता और उनका योगदान

- विजय सिंह पथिक (भूप सिंह गुर्जर):
 - इन्हें इस आंदोलन का जनक और मुख्य संचालक माना जाता है।
 - इन्होंने 1917 में 'ऊपरमाल पंच बोर्ड' की स्थापना की।
 - 'प्रताप', 'राजस्थान केसरी' जैसे समाचार पत्रों के माध्यम से इस आंदोलन को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाई। [1, 2, 3, 4]
- साधु सीताराम दास:
 - इस आंदोलन के प्रथम चरण (1897-1914) के प्रमुख प्रेरक और मार्गदर्शक थे।
 - इन्होंने ही सबसे पहले किसानों को एकजुट किया और स्थानीय स्तर पर आवाज उठाई। [1, 2]
- माणिक्य लाल वर्मा:
 - आंदोलन के अंतिम चरण में नेतृत्व संभाला।
 - इन्होंने अपना प्रसिद्ध गीत 'पंछीड़ा' गाकर किसानों में नया जोश और ऊर्जा भरी। [1]
- नानजी पटेल और ठाकरी पटेल:
 - ये दोनों किसान नेता मेवाड़ के महाराणा फतेह सिंह के पास बिजौलिया के किसानों की पीड़ा और 84 प्रकार के करों की शिकायत लेकर गए थे। [1]
- हरिभाऊ उपाध्याय:
 - गांधीजी के अनुयायी और प्रसिद्ध पत्रकार, जिन्होंने बाद के वर्षों में आंदोलन को वैचारिक और राजनीतिक मजबूती दी। [1, 2]
- जमनालाल बजाज:
 - गांधीजी के निर्देश पर आंदोलन से जुड़े और इसके अंतिम दौर में इसका कुशल संचालन किया। [1, 2]
- अन्य स्थानीय नेता:
 - इसमें फतेह करण चारण, प्रेमचंद भील और ब्रह्मदेव जैसे स्थानीय कार्यकर्ताओं ने भी जमीनी स्तर पर संगठन को मजबूत बनाए रखा।

परिचय

स्वतंत्रता संग्राम के महान क्रांतिकारी, राजस्थान में बिजौलिया किसान आंदोलन के माध्यम से किसानों को उनके हित और अधिकारों की रक्षा के प्रति सजग करने वाले प्रणेता, साहित्यकार, पत्रकार, सामाजिक जागरूकता एवं क्रांतिकारी विचारों के अग्रदूत, राजस्थान केसरी, हम सबके आदर्श श्री विजय सिंह पथिक जी (श्री भूप सिंह गुर्जर) की 145वीं जयंती पर सादर नमन, विनम्र श्रद्धांजलि 🙏 जय पथिक

श्री विजय सिंह पथिक जी ने जिस नई पीढ़ी के लिए अपनी जवानी और जीवन न्यौछावर कर दिया था, उसी पीढ़ी ने ही उन्हें भुला दिया।

श्री विजय सिंह पथिक को राजस्थान के प्रथम विधानसभा चुनाव 1952 में मांडलगढ़ जिसमें पूरा बिजौलिया क्षेत्र आता था से मात्र 968 वोट मिले थे...

ये वही पथिक जी थे जिनको पढ़े और पढ़ाये बिना राजस्थान का आधुनिक इतिहास अधूरा रहता है। भारत का सबसे लम्बा और संगठित किसान आन्दोलन (बिजोलिया आन्दोलन) चलाने वाले श्री विजय सिंह पथिक जी। राजस्थान में राजनैतिक और सामाजिक चेतना को जगाने वाले पथिक जी। राजस्थान के उस समय के आंदोलनों के मजबूत स्तंभ पथिक जी, पर लोग वोट उस शख्स को नहीं दे पाए जिसने अपनी जवानी उनके लिए कुर्बान कर दी। वर्ष 1952 के आम चुनावों में विजयसिंह पथिक ने माण्डलगढ़ क्षेत्र के लिए कांग्रेस से टिकट मांगा जिसमें पूरा बिजौलिया क्षेत्र आता था, किंतु कांग्रेस ने माणिक्य लाल वर्मा की पत्नी के भाई गणपति लाल वर्मा को टिकट दे दिया। बिजोलिया के पूर्व जागीरदार राव केसरीसिंह रामराज्य परिषद के टिकट पर चुनाव लड़ रहे थे, इसलिए पथिक ने निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में पर्चा भरा जिन्हें सिर्फ 968 वोट मिले और पथिक जी चुनाव हार गए। और साथ ही कांग्रेस उम्मीदवार वर्मा भी। विजय सिंह पथिक जी ने जिन जागीरदारों के खिलाफ जीवन भर जिस जनता की तरफ से लड़ते रहे, उसी जनता ने पथिक की जगह जागीरदार को ही चुन लिया। अद्भुत व्यक्तित्व का अद्भुत संघर्ष वोट के आगे चूर चूर हो गया।

बिजोलिया किसान आंदोलन के जनक, स्वतंत्रता संग्राम के अग्रदूत और 'राजस्थान केसरी' के नाम से विख्यात महान क्रांतिकारी विजय सिंह पथिक जी की जयंती पर उन्हें शत-शत नमन।[1,2,3]

उन्होंने किसानों, शोषितों और वंचितों की आवाज़ बनकर अन्याय के विरुद्ध संघर्ष का बिगुल फूँका। बिजोलिया आंदोलन के माध्यम से उन्होंने संगठित जनशक्ति की ताकत को राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित किया और स्वतंत्रता आंदोलन को नई दिशा दी।

राजस्थान सहित पूरा देश उनके अमूल्य योगदान का सदैव ऋणी रहेगा।

विचार-विमर्श

बिजौलिया आंदोलन कुछ दिनों का विद्रोह नहीं, बल्कि लगभग चार दशकों में विकसित हुआ बहु-पीढ़ी किसान संघर्ष था। स्थानीय अर्जियों से शुरू होकर यह किसान पंचायत, कर-विरोध, हल-बंदी, भूमि-इस्तीफा, सत्याग्रह, प्रेस अभियान और भूमि-वापसी तक पहुँचा। आंदोलन का यह लंबा क्रम बताता है कि देसी रियासतों में किसान राजनीति ने राष्ट्रीय आंदोलन से संवाद करते हुए भी अपनी विशिष्ट स्थानीय मांगें और संगठन विकसित किए।

बिजौलिया किसान आंदोलन के इतिहास में 1916-17 का संगठनात्मक पुनर्गठन उतना ही महत्वपूर्ण था जितना 1897 की पहली सामूहिक शिकायत या 1913 की हल-बंदी। पहले किसानों ने यह सिद्ध किया था कि वे सामूहिक रूप से प्रतिरोध कर सकते हैं; अब चुनौती थी कि उस सामूहिकता को ऐसी संस्था में बदला जाए जो आंदोलन को वर्षों तक चला सके।

विजय सिंह पथिक और उनके सहयोगियों ने इसी आवश्यकता को पहचाना। गांवों में किसान पंचायतों का ढांचा खड़ा किया गया और उनके ऊपर केंद्रीय समन्वयकारी संस्था के रूप में ऊपरमाल पंच बोर्ड विकसित हुआ। उपलब्ध अध्ययनों में इसके गठन का वर्ष सामान्यतः 1917 और स्थान बैरीसाल/बेरीसाल गांव बताया गया है; बोर्ड में 13 सदस्यों और मन्ना पटेल के सरपंच होने का उल्लेख भी मिलता है।

इस संगठन की ऐतिहासिक महत्ता केवल इतनी नहीं थी कि उसने आंदोलन चलाया। उसने जागीरदार के सामने पहली बार किसानों की एक स्थायी, प्रतिनिधिक और अनुशासित सामूहिक सत्ता खड़ी कर दी। बिजौलिया किसान आंदोलन के विकास में 1917-1918 का दौर निर्णायक राजनीतिक मोड़ था। 1897 में किसानों ने शिकायत की थी, 1913 में हल-बंदी का रास्ता अपनाया था और 1916-17 तक विजय सिंह पथिक के नेतृत्व में किसान पंचायतों तथा ऊपरमाल पंच बोर्ड के रूप में संगठन खड़ा हो चुका था। अब पहली बार इस संगठन की वास्तविक परीक्षा होने वाली थी।[4,5,6]

इस परीक्षा का तात्कालिक कारण बना प्रथम विश्वयुद्ध।

ब्रिटिश साम्राज्य युद्ध लड़ रहा था। देशी रियासतों से धन और संसाधन जुटाए जा रहे थे और इसका बोझ अंततः ग्रामीण जनता तक पहुंच रहा था। बिजौलिया में पहले से भू-राजस्व, लाग-बाग और बेगार से परेशान किसानों से जब युद्ध के लिए अतिरिक्त आर्थिक योगदान मांगा गया तो संघर्ष फिर भड़क उठा। उपलब्ध अध्ययनों में 1916 से युद्ध-कोष संबंधी अतिरिक्त मांगों के कारण असंतोष बढ़ने और पथिक द्वारा किसानों को संगठित कर इनका विरोध कराने का उल्लेख मिलता है।

लेकिन यहां एक कालक्रम संबंधी सावधानी आवश्यक है। अलग-अलग स्रोत युद्ध-अंशदान के तीव्र विरोध को 1916, 1917 अथवा 1918 से जोड़ते हैं। इसलिए इसे किसी एक दिन या वर्ष की घटना के बजाय 1916-18 में विकसित संघर्ष के रूप में समझना अधिक सुरक्षित है। 1917 में संगठन और मांगपत्रों का चरण स्पष्ट दिखाई देता है, जबकि 1918 में व्यापक असहयोग अधिक तीखा हुआ।

1. यूरोप का युद्ध बिजौलिया के किसान तक कैसे पहुंचा?

28 जुलाई 1914 को प्रथम विश्वयुद्ध शुरू हुआ और ब्रिटेन उसके प्रमुख पक्षों में था। ब्रिटिश भारतीय साम्राज्य भी स्वतः युद्ध में शामिल हो गया।

ब्रिटिश भारत के साथ देशी रियासतों से भी सहयोग अपेक्षित था।

मेवाड़ जैसी रियासतें ब्रिटिश सर्वोच्चता के अधीन थीं और साम्राज्य के प्रति राजनीतिक निष्ठा प्रदर्शित करना उनके लिए महत्वपूर्ण था।

लेकिन रियासत संसाधन कहाँ से जुटाती?

अंततः उसका आर्थिक आधार उसकी प्रजा थी।

इस प्रकार हजारों किलोमीटर दूर चल रहा यूरोपीय युद्ध बिजौलिया के किसान की जेब तक पहुंच गया।

इसलिए जब उससे युद्ध के लिए अतिरिक्त योगदान मांगा गया तो प्रश्न स्वाभाविक था—

जिस युद्ध का निर्णय हमने नहीं किया, उसका अतिरिक्त आर्थिक बोझ हम क्यों उठाएं?[7,8,9]

यही प्रश्न युद्ध-अंशदान को सामान्य कर से अलग राजनीतिक अर्थ देता है।

3. युद्ध-अंशदान वास्तव में क्या था?

बिजौलिया आंदोलन के विभिन्न स्रोत इसे अलग-अलग शब्दों में दर्ज करते हैं—

युद्ध चंदा, युद्ध कोष, युद्ध-अंशदान, युद्ध ऋण अथवा वार फंड।

इतिहास की दृष्टि से मुख्य तथ्य यह है कि प्रथम विश्वयुद्ध की आवश्यकताओं के नाम पर किसानों से अतिरिक्त आर्थिक योगदान मांगा जा रहा था और किसान पंचायत ने उसका विरोध किया।

परिणाम

राष्ट्रीय प्रेस में बिजौलिया — गणेश शंकर विद्यार्थी का 'प्रताप', विजय सिंह पथिक की प्रचार रणनीति और स्थानीय किसान संघर्ष का राष्ट्रीय मुद्दे में रूपांतरण

बिजौलिया किसान आंदोलन की सबसे बड़ी समस्याओं में से एक उसकी भौगोलिक और राजनीतिक एकांतता थी। किसान लगभग दो दशकों से संघर्ष कर रहे थे, लेकिन जागीर और मेवाड़ की रियासती संरचना के भीतर उनकी आवाज आसानी से सीमित की जा सकती थी। स्थानीय स्तर पर गिरफ्तारी, बेदखली, कर-वसूली या दमन हो—यदि उसकी खबर बाहर न जाए तो प्रशासन पर सार्वजनिक दबाव बहुत कम रहता था।

विजय सिंह पथिक ने इस कमजोरी को पहचाना।

उन्होंने बिजौलिया की लड़ाई को दो मोर्चों पर लड़ने की रणनीति विकसित की। पहला मोर्चा था खेत और गांव, जहां किसान पंचायतें जागीरदार के विरुद्ध संघर्ष कर रही थीं। दूसरा था जनमत और प्रेस, जहां यह साबित करना था कि बिजौलिया कोई स्थानीय झगड़ा नहीं बल्कि किसानों के अधिकारों और रियासती शासन की जवाबदेही का प्रश्न है।

इस दूसरे मोर्चे पर सबसे महत्वपूर्ण सहयोग मिला कानपुर से निकलने वाले हिंदी समाचार पत्र 'प्रताप' और उसके निर्भीक संपादक गणेश शंकर विद्यार्थी का।[3,4,5]

यहीं से बिजौलिया आंदोलन की एक नई यात्रा शुरू हुई—

गांव → पंचायत → पथिक → समाचार पत्र → राष्ट्रीय जनमत।

1. रियासत में किसान की सबसे बड़ी कमजोरी — उसकी आवाज बाहर नहीं जाती थी

ब्रिटिश भारत और देशी रियासतों की राजनीतिक परिस्थितियों में महत्वपूर्ण अंतर था।

ब्रिटिश प्रांतों में भी प्रेस पर अनेक प्रतिबंध थे, लेकिन—

में सक्रिय समाचार पत्र सार्वजनिक राजनीतिक बहस का मंच बन चुके थे।

देशी रियासतों में स्थिति अधिक जटिल हो सकती थी।

राजा, जागीरदार और स्थानीय प्रशासन के खिलाफ खुली आलोचना जोखिमपूर्ण थी।

बिजौलिया जैसे जागीरी क्षेत्र में किसान की शिकायत पहले स्थानीय सत्ता की दीवार से टकराती थी।

इसलिए प्रेस तक पहुंचना आंदोलन के लिए केवल प्रचार नहीं—

2. पथिक ने प्रेस की शक्ति क्यों समझी?

विजय सिंह पथिक का राजनीतिक अनुभव स्थानीय कृषक राजनीति तक सीमित नहीं था।

वे क्रांतिकारी राष्ट्रवादी नेटवर्क से जुड़े रह चुके थे।

वे जानते थे कि ब्रिटिश शासन और रियासती सत्ता के खिलाफ संघर्ष में—

बिजौलिया पहुंचने के बाद उन्होंने महसूस किया कि किसान के पास संख्या है, लेकिन उसकी आवाज सीमित है।

प्रेस उस संख्या को राजनीतिक दृश्यता दे सकता था।[5,6,7]

यदि किसान के साथ हुए अन्याय की खबर बाहर पहुंच जाए तो शक्ति-संतुलन बदल सकता था।

बिजौलिया आंदोलन को राष्ट्रीय मंच तक पहुंचाने वाले प्रमुख पत्रकार थे—

वे हिंदी पत्रकारिता और भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के महत्वपूर्ण व्यक्तित्व थे।

गांधी, तिलक और बिजौलिया — राष्ट्रीय नेतृत्व का हस्तक्षेप, महादेव देसाई की जांच, महाराणा को पत्र और विजय सिंह पथिक से रणनीतिक मतभेद

बिजौलिया किसान आंदोलन के इतिहास में 1918-1919 का दौर स्थानीय संघर्ष और अखिल भारतीय राष्ट्रीय राजनीति के सीधे संपर्क का समय था। विजय सिंह पथिक और किसान पंचायतों ने आंदोलन को संगठित किया, राष्ट्रीय प्रेस—विशेषकर गणेश शंकर विद्यार्थी के 'प्रताप'—ने उसे राजस्थान की सीमाओं से बाहर पहुंचाया और अब उसकी प्रतिध्वनि देश के दो सबसे प्रभावशाली राष्ट्रवादी नेताओं तक पहुंच रही थी—लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक और महात्मा गांधी।

लेकिन इस राष्ट्रीय हस्तक्षेप को केवल इस सरल कथा में नहीं समेटा जा सकता कि “गांधी और तिलक ने बिजौलिया आंदोलन का समर्थन कर दिया।”

तिलक किसानों की शिकायतों को राष्ट्रीय मंच तक उठाने के प्रति अपेक्षाकृत अधिक तत्पर दिखाई देते हैं। गांधी ने भी शिकायतों को गंभीर माना, महादेव देसाई को बिजौलिया भेजा और एक चरण पर स्वयं सत्याग्रह का नेतृत्व करने की संभावना तक स्वीकार की; लेकिन वे देशी रियासतों में कांग्रेस के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के प्रश्न पर अत्यंत सावधान थे। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण गांधी के अपने संकलित पत्राचार में मिलता है—फरवरी 1919 के एक पत्र में उन्होंने लिखा कि महादेव अभी बिजौलिया से वापस नहीं लौटे थे; संपादकीय टिप्पणी भी स्पष्ट करती है कि महादेव देसाई को गांधी ने विशेष रूप से वहां की जनता की शिकायतों की जांच के लिए भेजा था और गांधी ने एक चरण पर वहां सत्याग्रह का नेतृत्व करने पर सहमति दी थी।

यहीं विजय सिंह पथिक और गांधी की रणनीतियों के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर उभरता है।

1. बिजौलिया अब राष्ट्रीय नेतृत्व की नजर में क्यों आया?

1897 से लगभग दो दशक तक बिजौलिया का आंदोलन मुख्यतः मेवाड़ और राजस्थान के राजनीतिक दायरे में था।

1916 के बाद परिस्थितियां तेजी से बदलीं। [8,9]

और राष्ट्रीय प्रेस में आंदोलन की खबरें—

इन सबने बिजौलिया को स्थानीय जागीरी विवाद से कहीं बड़ा प्रश्न बना दिया।

क्या राष्ट्रीय आंदोलन देशी रियासतों में सामंती उत्पीड़न के खिलाफ संघर्षरत जनता के साथ खड़ा होगा?

2. तिलक और गांधी तक पहुंचने के दो अर्थ

बिजौलिया का राष्ट्रीय नेताओं तक पहुंचना केवल प्रतिष्ठा की बात नहीं थी।

किसान नेतृत्व को इससे तीन चीजें मिल सकती थीं—

यदि तिलक अथवा गांधी बिजौलिया के किसानों की शिकायत को न्यायोचित मानते हैं तो मेवाड़ दरबार के लिए उसे केवल “उपद्रव” बताना कठिन हो जाता।

यही विजय सिंह पथिक की प्रचार रणनीति की बड़ी सफलता थी।

✂entity ["politician", "Bal Gangadhar Tilak", "Indian nationalist leader 1856–1920"] उस समय भारतीय राष्ट्रवादी राजनीति के सबसे प्रभावशाली नेताओं में थे।

बिजौलिया की परिस्थितियां उनके संज्ञान में आने के बाद उन्होंने किसानों की शिकायतों को गंभीरता से लिया।

पथिक संबंधी जीवनी साहित्य और बिजौलिया के इतिहास के अनेक विवरणों में दर्ज है कि तिलक ने मेवाड़ के महाराणा फतेह सिंह को पत्र लिखकर किसानों की मांगों पर ध्यान देने को कहा।

यह अपने आप में बड़ी राजनीतिक घटना थी। [8]

एक जागीर के किसान प्रश्न पर अखिल भारतीय प्रतिष्ठा वाला नेता सीधे मेवाड़ के शासक से संवाद कर रहा था।

निष्कर्ष

बिजौलिया की सबसे बड़ी ऐतिहासिक उपलब्धि केवल कुछ करों या बेगार पर रोक नहीं थी। उसने जागीरी व्यवस्था में किसान को आज्ञापालक प्रजा से संगठित राजनीतिक पक्ष में बदला। पंचायत, सामूहिक अनुशासन, प्रेस और सत्याग्रह ने ग्रामीण शिकायत को दीर्घकालीन सार्वजनिक आंदोलन बनाया। समझौतों के अधूरे क्रियान्वयन, नेतृत्वगत मतभेद और बार-बार लौटे दमन के बावजूद भूमि-वापसी तक संघर्ष जारी रहना उसकी असाधारण संगठनात्मक शक्ति का प्रमाण है। इसी प्रक्रिया ने मेवाड़ और राजस्थान की प्रजा-राजनीति के लिए सामाजिक आधार तैयार किया। [9]

संदर्भ

1. सरकार, सुमित (1989). मॉडर्न इंडिया 1885-1947 . न्यूयॉर्क: पाल्ग्रेव मैकमिलन. पेज 155. ISBN 9780312012991.
2. "बिजौलिया आंदोलन" . भारत के इतिहास का शब्दकोश . 6 जून 2009 . 21 अक्टूबर 2018 को लिया गया .
3. CSK सिंह, "1920 के दशक में राजस्थान में भीलों की राजनीति में भागीदारी" सोशल साइंटिस्ट , यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस, v 13, no. 143 (अप्रैल 1985) p. 32.
4. आर.के. गुप्ता; एस.आर. बख्शी (2008). स्टडीज इन इंडियन हिस्ट्री: राजस्थान थू द एजेस द हेरिटेज ऑफ़ राजपूतस (वॉल्यूम 5) . सरूप एंड संस. पेज 319- 320. आईएसबीएन 978-8176258418.
5. पांडे, राम (1974). राजस्थान में कृषि आंदोलन . यूनिवर्सिटी पब्लिशर्स (इंडिया).
6. शर्मा, बृज किशोर (1990). राजस्थान में किसान आंदोलन (1920-1949) . जयपुर: पॉइंटर पब्लिकेशन्स. पेज 72. ISBN 8171320244.
7. सक्सेना, के.एस. (1971). राजस्थान में राजनीतिक आंदोलन और जागृति (1857 से 1947) . नई दिल्ली: एस. चंद एंड कंपनी (प्राइवेट) लिमिटेड. पेज 150.
8. जैन, एम.एस. (1996). राजस्थान थू द एजेस: ए कॉम्प्रेहेंसिव हिस्ट्री ऑफ़ राजस्थान, वॉल्यूम III . बीकानेर: राजस्थान स्टेट आर्काइव्स. पेज 451 - 455.

9. शर्मा, बृज (1993). राजस्थान में किसान आंदोलन और राजनीतिक चेतना (जी.एन. शर्मा और वी.के. वशिष्ठ (एडिटर), राजनीतिक जागृति और भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन राजस्थान के विशेष संदर्भ में (106-115)। जयपुर: सेंटर फॉर राजस्थान स्टडीज। पेज 106-115 ।